'अवधेस के बालक चारि सदा

तुलसी मन मन्दिर में बिहरैं'

मानस में अल्प बाल वर्णन का आलोचनात्मक अध्ययन

गोस्वामी तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' हिन्दी की एक ऐसी रचना है जिसके विभिन्न संदर्भ रचनात्मकता, विषयवस्तु, काव्यभाषा तथा जीवन मूल्यों की दृष्टि से सदा प्रासंगिक है। 'नानापुराणनिगमागम' कहकर तुलसी ने अपनी रचना में ग्रहण किए गए रामचरित को सर्वथा ग्राहय बनाने के लिए कृति का नाम रामचरित मानस रखा। रचना के आरम्भ में कवि कहता है कि रचना का उद्देश्य स्वान्तः है—

नानापुराण निगमागम सम्मतं यद्। रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोअपि। स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा। भाषानिबन्धमतिमंजुल मातनोति।

रामायण का उल्लेख करके कवि पूर्व के कृतिकारों के प्रति श्रृद्धा भावना व्यक्त करते हुए स्वयं को उनकी तुलना में अल्पमति वाला कहता है। 'कवित विवेक एक नहिं मोरे' लिखकर तुलसी अपने शास्त्रीय ज्ञान या काव्य प्रतिभा को चाहे जितना अल्प करते हो किन्तु उनकी जैसी प्रतिभा तथा काव्यशास्त्रीय ज्ञान पूरे भाक्तिकाल के किसी कवि में नहीं मिलता। अत्यंत सहज भाव से कवि रचना के आरम्भिक खण्ड में ही कहते है।

'संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। रामचरितमानस कवि तुलसी।'

अपनी ओर से कवि ने यह कहकर इस रचना को भगवान शिव का प्रसाद बताया है। मानस कथा के एक वक्ता भी शंकर हैं जो पार्वती को संबोधित कर कथासूत्रो को बनाते और बुनते हैं। 'रामचरितमानस' के माध्यम से तुलसी ने राम के जीवन की समस्त घटनाओं को कमशः चित्रित किया है किन्तु समीक्षको द्वारा उनके कृतित्व दर्शन, भक्ति, लोकमंगल की भावना तथा उसके विराधो के सामंजस्य पर जितनी चर्चायें की गई, उतनी बालवर्णन पर लेखनी नहीं चली। तुलसी की भावुकता शीर्षक निबंध में आ0 रामचंद्र शुक्ल ने जिन प्रमुख वर्णनो का उल्लेख किया है उनमें भी बालवर्णन का स्थान नहीं है। 'रामचरितमानस' तथा अन्य कृतियों में विविध संदर्भो में रामजन्म से पूर्व की घटनाओं से चलकर उनके विवाहोपरान्त वनगमन तक की रामकथा के अंश को हम उनकी बाल्यावस्था और किशोरावस्था से जोड़कर देखना समझना चाहते है।

न केवल 'रामचरितमानस' अपितु तुलसी का सम्पूर्ण साहित्य भक्ति और दर्शन के लिए जितना चर्चा में है उससे अधिक मानस की पंक्तियों में सामान्य जीवन की नीतियों का उल्लेख विद्यमान हैं मानसकार को भारतीय जनजीवन का जितना विशुद्ध अनुभाव है वे उतनी ही गहराई में उतरकर विभिन्न पात्रों के अन्तर्मन में विद्यमान श्रद्धा के रत्नो को

मणियों की तरह खोज निकालते है उन्हीं मणिंयो में एक अति विशिष्ट आमा है– राम नाम मणि की–जो अंदर से बाहर तक सर्वत्र प्रकाश किया करती है–

'राम नाम मनि दीप धरू, जीह दंहरी द्वार।

तुलसी भीतर बाहरेहु, जौ चाहसि उजियार।

ऐसे उजाले का प्रथम प्रयास मानस के प्रथम खंड में विद्यमान है किन्तु रामजन्म की कथा लेखन से पूर्व रचनाकार ऐसी अनेक पौराणिक कथाओं का उल्लेख इस काण्ड में करता है जो राम के जन्म का कारण बनती है। इसी जन्म लेने के कारण को तुलसी– 'जब जब होय धरम के हानि। बाढ़ै असुर अधम अभिमानी। तब–तब प्रभु धरि मनुज सरीरा। हरैं कृपानिधि सज्जन पीरा। के माध्यम से व्यक्त करते हैं जो भगवत्गीता की पंक्तियो का अनुवाद है–

'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लार्निभवति भारत।

अभ्युत्थानमअधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।

राम के अवतार का कारण भले ही धरती दुःख का निवारण हो किन्तु मानसकार यह कहलवाता है कि–

'कश्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुं मै पूरब बर दीन्हा।

सोई दशरथ कौशल्या रूपा। प्रगटे अवधपुरी नरभूपा।

तिन्ह के गृह अवतरिहउॅ जाई। हरिहउॅ सकल भूमि गरूआई।

यदि गोस्वामी जी इतने सारे कथावृत्तों को न भी लिखते तो भी कृति की प्रभावोत्पादकता में कोई कमी न आने पाती किन्तु मानस के आरम्भ में नानापुराणनिगमागम सम्मति लिखने के कारण तुलसी को ऐसा लगा होगा कि जो कथा पौरोहित्य के माध्यम से वे यजमानों को सुनाया करते थे उसे यदि रचना के रूप में सुनायेंगे तो 'रामकथा कलि कलुष नसावहिं' होने के साथ–साथ –मुद मंगलकारी' भी हो जाएगी इसीलिए वे मानस के बालवर्णन का आरम्भ बालको की कीडा से करते है। इसी कम में अवधेस के बालक चारि सदा। तुलसी मन–मंदिर में बिहरैं पंक्तियां उनकी कृति कवितावली में भी विद्यमान हैं।

मानस में विस्तार से गोस्वामी जी ने बालवर्णन इसलिए नहीं किया है कि किसी भी प्रबन्धात्मक कृति में विभिन्न संदर्भो पर दृष्टि डालना आवश्यक होता है। इसीलिए सूर के बालवर्णन की तुलना में गोस्वामी जी का बालवर्णन संक्षिप्त ही है। मानस में वे लिखते हैं–

'बाल चरित हरि बहु विधि कीन्हा। अति अनंद दासन्ह कहँ दीन्हा।

कछुक काल बीतें सब भाई। बड़े भए परिजन सुखदाई।

चूड़ा करन कीन्ह गुरू तब जाई। बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई।

मन कम बचन अगोचर जोई।

बालवृत्त के अनुरूप भोजन करते–करते चित्त की चंचलता के कारण दधि–ओदन लपटाकर भाग जाने वाले अवधेश के बालको का वर्णन करके गोस्वामी जी यह प्रस्तुत करना चाहते है कि राम की बाल्यवस्था अवध की सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप है। बालक के मन की चंचलता को देखने और चित्रित करने के लिए सारद शेष अथवा शंभु के द्वारा उसे कहला कर गोस्वामी जी राम के अवतार में श्रद्धा आस्था कम नहीं करना चाहते और इसी ब्रहमावस्था को स्थापित करने के लिये गोस्वामी जी भगवान शंकर के मुख से कहलाते है–' बन्दहु बाल रूप सोई रामू'

एक भक्त के लिए ऐसा वर्णन भले ही बोधगम्य हो लेकिन जनमानस हेतु राम को मर्यादा भूमि से उतारकर लोकभूमि में प्रस्तुत करने पर यह कथानक अधिक हृदयग्राही बन जाता है। मानस के इन विषयों का चित्रण करते हुए रचनाकार को इतनी शीघ्रता है कि अगली चौपाइयों के खण्ड में वे विद्याध्ययन का भी वर्णन करने लगते हैं– ' गुरू गृहँ गए पढन रघुराई। अलप काल विद्या सब आई। जाकी सहज स्वास श्रृति चारी। सो हरि पढ यह कौतुक भारी।

ऐसे वर्णनों के बीच में सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी' जैसे वर्णन बालवर्णन को पारलौकिक बनाता चलता है। कवि को ऐसा लगता है कि हर दो तीन पंक्तियों के बाद जब तक यह न प्रतिपादित करते चलें कि राम भले ही मानवीय लीला में संलग्न हैं किन्तु ये ईश्वर है अथवा ईश्वर के ही अवतार हैं। रचनाकार की दृष्टि बाल मनोविज्ञान पर अन्य कृतियों में भले ही पड़ी हो किन्तु मात्र दोहा संख्या 200 से 206,207 तक विभिन्न लीलाओं का दृश्यावलोकन कराकर कवि पाठकों को नाटकीय आनंद देना चाहता है। मुनि आगमन तथा उनके द्वारा किशोरों को यज्ञ रक्षा हेतु मांगना व दशरथ के समक्ष यह धर्म संकट चौथेपन पायहुँ सुख चारी। विप्र वचन नहिं कहहुँ विचारी। यह सोचने के लिए विवश करता तथा पिता का राम की इस समर्थ्य से अनभिज्ञ रहते हुये ममता के वशीीू होना है कि तुलसी के लिए बालवर्णन का महत्व उतना नहीं है जितना उन्हें शक्ति के अवतार रूप में प्रस्तुत करता।

मानस अथवा कवितावली या गीतावली की पंक्तियो पर ध्यान देने के बाद यह लगता है कि तुलसी ने जितनी रूचिपूर्वक कवितावली में बाल चित्र प्रस्तुत किया है उतनी रूचि मानस में नहीं ली। कवितावली का एक अंश इस दृष्टि से उल्लेखनीय है–

बरदंत की पंगति कुन्दकली, अधराधर पल्लव खोलन की।

चपला चमकैं धन बीच जगैं, छबि मोतन माल अमोलन की।

धुंघुरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर कुंडल लोल कपोलन की।

निबछावरि प्राण करैं तुलसी, बलि जाउँ लला इन बोलन की।

ऐसे दृश्यों को पढकर यह आश्वस्त हुआ जा सकता है कि कवि को शब्दो के प्रयोग से विराट् चित्रो की निर्मिति में अद्भुत सफलता मिली है।

सम्पूर्ण प्रतिमा का उपयोग उन्होंने मानस में ही नहीं अन्य कृतियों में भी किया हैं। बाल स्वभाव के अन्तर्गत माता के हृदय मे प्रवेश करके उसके ऊपर पड़ने वाले प्रभावों के चित्रण में जितनी सफलता सूर को मिली उतनी तुलसी को नहीं। एक अंश में कंस के यहां से बुलावा आने पर यशोदा के मन में उठने वाली वेदना और आशंका सूर की सहृदयता का प्रमाण है–

'कहा काज मेरे छगन मगन को। नृप मधुपुरी बुलाये।

सुफलक सुत मेरे प्राण हरन को। काल रूप हुइ आये।

बरू वे गोधन हरैं कंस सब। मोहि बंदि लै मेलौ।

इतनौ ही सुख कमल नयन। मोरि अँखियन आगे खेलौ।

ऐसी वंदना कैकेई, कौशल्या अथवा सुमित्रा के हृदय में या तो उपजती ही नहीं या भक्तिभाव में सराबोर रचनाकार उन उहराइयों में उतरना ही नहीं चाहता। अन्यथा कौशल्या यह कभी न कहतीं कि

'जौ केवल पितु आयसु ताता। तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता।

जौ पितु मातु कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अवध समाना।

मॉ के हृदय की अनुभूतियों पर आदर्श कर ऐसा बंधन अन्य कृतियों में विरल ही है। कौशल्या का मातृत्व दशरथ के पितृ हृदय की भावुकता से दबता सा दिखाई पड़ता है। गोस्वामी जी के बालवर्णन का मूल्यांकन यदि सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से कराना हो तो उनमें वह मर्यादित अवस्था देखी जाती है जिसके कारण रचनाकार आद्योपान्त भक्ति भावना में ही तल्लीन रहता है। तुलसी की प्रासंगिकता के संदर्भ में यह प्रश्न उठाया

जा सकता है कि मानसकार राम कथा के आरम्भ से ही यह प्रतिपादित करना चाहता है कि राम मात्र बालक नहीं, राजा के पुत्र भी नहीं अपितु वे साक्षात् परब्रहम के अवतार हैं जो लोकोद्धार हेतु जन कल्याणकारी भावना के वशीभूत होकर कौशल्या की गोद में आए हैं वे मॉ को अपना अद्‌भुत रूप दिखा कर उन्हें चकित कर देते है–

दिखरावा मातहिं निज अदभुत रूप अखण्ड।

रोम रोम प्रति राजहिं कोटि–कोटि ब्रहमांड।।

अगणित रवि शशि शिव चतुरानन।

महि गिरि सरिज सिंधु वन काननि।।

देखी माया सब विधि गाढ़ी,

अति समीत जोरे कर ठाढ़ी।

साथ ही इसी के समानार्थी वर्णन काक मुधुण्ड द्वारा राम के बालरूप के सम्बन्ध में गरूड़ से राम कथा कहते समय उत्तरकाण्ड में भी है।

उदर माफ सुनु अण्डज राया। देखेउ बहु ब्रहमण्ड निकायॉ।

कोटिन चतुरानन गौरीसा। अगणित उडुगन रवि रजनीसा।

अगणित मूधर भूमि विसाला। अगणित भूमि पाल ज्ञन, कल परन्तु 'प्रभु राम न देखहुँ आन'

राम के इस विराट् स्वरूप को देखकर माता कौशल्या इतनी भयाक्रान्त हो जाती हैं कि वे राम से शिशुलीला करने का निवेदन करती है। ऐसे दृश्य श्रीमद् भगवत गीता में कृष्ण ने अर्जुन को भी दिखाया है। श्रीमद् भगवत गीता के रचयिता भी तुलसी के विराट् चित्र के प्रेरक है। गीता में भी कृष्ण का विराट् रूप अर्जुन के समझ से परे है और सूरसागर में माटी खाने वाले मोहन की माटी उगलवाते समय यशोदा उनके मुख में सृष्टि का रूप देखती है। जिससे वे भी अर्जुन और कौशल्या की तरह भयभीत हो जाती है। मानसकार ने ऐसे करिश्माई व्यक्तित्व को अपनी कृति की उपादेयता को प्रतिपादित करने हेतु चित्रित किया है किन्तु ऐसे संवेदनयुक्त चित्रों के माध्यम से कवि का व्यक्तित्व पांडित्य की ओर झुक जाता है और मातृ वत्सलता लड़खड़ाने लगती है। अपने ही बालक में शिशुलीला की चंचलता न देखना माता के लिए महान कष्टकारक हो जाता है। जिसका निराकरण पूर्वघोषित कार्यकम के अनरूप चरितार्थ होता है–

'जाने डरपहु मुनि सिद्धि सुरेसा। तुमहिं लागि धरिहौं नावेषा।'

राम द्वारा की गई यह घोषण जनमंगल के हेतु लिए गए अवतार के आधारा की आस्था को पुष्ट करती है।

मानस की व्यामा भावभूमि में श्रृंगारिकता, रसात्मक अनुभूति के विविध स्वरूप, लोकमंगल की दृष्टि तथा काव्य भाषा में प्रयुक्त शब्दों के बिम्बमय प्रयोग तुलसी की प्रतिमा के प्रमुख उदाहरण हैं। कवि ने सौन्दर्य निरूपण के बहाने ऐसे अनेक बिम्ब प्रस्तुत किए है जिन बिम्बों को एकत्रित कर देखना बड़ा सहज नहीं रह जाता–

'जो सुख सुधा पयोनिधि होई। परम रूपमय कच्छप सोई।

सोभा रजु मंदर सिंगारू। मथई पानि पंकज निज मारू।

इतने प्रयास के बाद सीता की जो छवि निर्मित होती हैं वह विश्वमोहिनी लक्ष्मी की तुलना मे उच्चतर हो जाती है। इसी प्रकार मानस के वर्ण्य विषय में समाहित राम का सम्पूर्ण चरित्र बाल वर्णन की प्रासंगिकता के लिए विचारणीय रहा है। जिन जिन बिन्दुओं पर समीक्षकों ने लेखनी चलाई है उनमें से अधिकांश पर वे सहमत होते देखे जाते है। वे बिन्दु है– तुलसी की भावभूमि में निर्मित होने वाले विभिन्न बिम्ब जिनका आधार मनोविज्ञान है। डॉ0 नगेन्द्र के शब्दों में–

'तुलसी मूलतः प्रबन्धकार हैं। 'रामचरितमानस' तो महाकाव्य है ही। 'गीतावली और 'कवितावली' में भी सम्पूर्ण रामकथा का स्पष्ट आधार है। अतः उनका भावक्षेत्र अत्यंत विस्तृत है और उनके काव्य में मानव जीवन की विविध अनुभूतियों का अनंत भण्डार मिलता है किन्तु ये सभी मनोवेग एक आंतरिक नैतिक चेतना से अनुशासित हैं।